ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI TITLED No. :UPBIL04292,
RNI REG. No.: UPBIL/2014/66218, SOCI.REG. No.: 561/2013-14 Vol.-5, No.-II, PP-220-227,YEAR- DEC.2016

ईस्ट इण्डिया कम्पनी शासन के अन्तर्गत 1813 ई0 का चार्टर ऐक्ट

❑ डॉ0 कृष्णकान्त

सार– *कम्पनी को अपने कुशल प्रशासन हेतु विधियां बनाने व अध्यादेष जारी करने की शक्ति प्रदान की गई थी तथा अपने अधिकारियों व व्यापार एवं यातायात के विषयों से सम्बन्धित विधियां बनाने व अध्यादेष जारी करने का अधिकार भी कम्पनी को प्राप्त था। इन अध्यादेषों व विधियों का पालन सुरक्षित हो, इसके लिए यह व्यवस्था की गई थी कि इनका उल्लंघन करने वालों को कम्पनी जुर्माना अथवा कठोर दंड दे सकती है। ब्रिटिष ताज के 1600 ई0 के आज्ञापत्र के द्वारा कम्पनी को विधायी शक्ति मान्य व समुचित नागरीय और व्यापारिक निगमों के मानकों के अन्तर्गत उपविधियां बनाने की शक्ति प्राप्त थी। यह एक गौण विधायन शक्ति थी, जिसमें अंग्रेजी विधि के सिद्धान्तों में कोई आधारभूत परिवर्तन कर सकना असम्भव था। चार्टर में किसी राज्यक्षेत्र के विधायन या प्रषासन संबंधी शक्ति प्रदत्त करने की कल्पना नहीं थी। इसकी शक्तियां मात्र इंग्लैण्ड के भीतर व बाहर व्यापार करने तक सीमित थीं।*

प्रस्तावना– 1793 ई0 के चार्टर ऐक्ट के पश्चात् 1813 ई0 का चार्टर ऐक्ट पारित किया गया, जो कि पहले चार्टर ऐक्ट की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण था। इस ऐक्ट ने कम्पनी के एकाधिकार को आघात पहुँचाया। साथ ही भारतीयों के लिए शिक्षा की व्यवस्था की गई। इन सब के अतिरिक्त इस ऐक्ट ने कम्पनी के भारतीय प्रदेशों पर ब्रिटिश सम्राट की प्रभुसत्ता को बल प्रदान किया।

1793 ई0 के चार्टर ऐक्ट ने दो प्रकार की नीतियों को जन्म दे दिया था। पहली यह कि भारत में होने वाली सारी आमदनी इंग्लैण्ड में अधिकारियों एवं प्रतिष्ठानों पर खर्च की जानी थी तथा दूसरी यह कि भारत में सत्ता को एक जगह केन्द्रित करना एक अत्यन्त आवश्यक कदम माना गया। ऐक्ट में राष्ट्र की ओर से यह घोषणा की गई थी कि अंग्रेजों का इरादा इलाके जीतना नहीं है। परन्तु वास्तव में आक्रामक साम्राज्यवाद का युग इसके तुरन्त बाद आने वाला था।

अगले 20 वर्षों के अन्दर राजनीतिक उथल–पुथल और लड़ाइयों में सबसे गुजरता हुआ इंग्लैण्ड आधुनिक इतिहास की सबसे बड़ी शाही सत्ता के रूप में उभरा। 19 वीं शताब्दी के प्रथम दशक में इंग्लैण्ड, नेपोलियन के फ्राँस के विरूद्ध जीवन व मरण का संघर्ष कर रहा था, दशक की समाप्ति तक नेपोलियन का साम्राज्य, महाद्वीपीय प्रणाली, प्रायद्वीपीय युद्ध एवं रूसी अभियान के बोझ तले समाप्त होने लगा था। उधर भारत में वेलेजली के युग की समाप्ति पर ब्रिटेन की प्रभुसत्ता स्थापित हो गयी थी। गौरव के इसी क्षण में वह समय आया, जबकि 1813 ई0 में कम्पनी का चार्टर नया किया जाना था।

चूँकि, 'कम्पनी को पूर्वी देशों के साथ व्यापार करने का एकाधिकार 1793 ई0 के चार्टर ऐक्ट द्वारा 20 वर्षों के लिए प्रदान किया गया था। 1813 ई0 में यह अवधि समाप्त हो गई थी',

जिसके चलते कम्पनी के संचालको द्वारा अधिकार पत्र के नवीनीकरण हेतु संसद से प्रार्थना की गई। चूँकि उस समय तक परिस्थितियों में अत्यधिक बदलाव आ गया था, साथ ही अनेक नई समस्याएं उत्पन्न हो गई थीं। जिसके कारण कम्पनी के व्यापारिक विशेषाधिकारों को जारी रख पाना असम्भव था।

'कम्पनी के एकाधिकार के विरोध का प्रथम कारण नेपोलियन बोनापार्ट की महाद्वीपीय व्यवस्था थी। 1808 ई0 से फ्राँसीसी शासक नेपोलियन ने ब्रिटिश व्यापार के लिए यूरोप महाद्वीप की नाकाबन्दी कर दी थी, जिसके चलते ब्रिटिश व्यापार को गहरा

❑ मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, लखनऊ विष्वविद्यालय, लखनऊ (उ0प्र0), भारत

धक्का पहुँचा था। अतएव ब्रिटिश व्यापारियों ने कहा कि कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार को समाप्त करते हुए सब देशवासियों को भारत के साथ व्यापार करने की स्वतंत्रता प्रदान की जाए', ताकि नेपोलियन की महाद्वीपीय व्यवस्था से हुए नुकसान की क्षतिपूर्ति की जा सके।

यह कम्पनी का दुर्भाग्य ही था कि उस समय इंग्लैण्ड में एडम स्मिथ द्वारा प्रतिपादित 'व्यक्तिवादी सिद्धान्त' अत्यन्त लोकप्रिय था। अतः कम्पनी के एकाधिकार पर वहां का व्यापारी वर्ग आक्रमण करने लगा।

व्यापारी वर्ग की मांग यह थी कि पूर्वी देशों से व्यापार करने का अधिकार केवल कम्पनी को ही नहीं होना चाहिए, वरन् सम्पूर्ण ब्रिटिश प्रजा का होना चाहिए। इस प्रकार व्यापारी वर्ग द्वारा सभी लोगों को स्वतंत्र व्यापार का अधिकार देने के लिए आन्दोलन चलाया गया। ब्रिटिश सरकार के लिए भी इन मांगो की अवहेलना करना कठिन हो गया।

इन्हीं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए लॉर्ड मैकविले ने 1811 ई0 में संचालक मन्डल को यह चेतावनी दी कि यदि कम्पनी के कर्ता–धर्ता इंग्लैण्ड के व्यापारियों को भारत में भाग नहीं लेने देंगे, तो ब्रिटिश सरकार के लिए संसद के पास कम्पनी के पक्ष में सिफारिश करना असम्भव होगा। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि इंग्लैण्ड में कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार के विराध में माहौल तैयार हो रहा था।

ईसाई धर्म प्रचारकों ने भी ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के अन्दर व बाहर यह आन्दोलन चला रखा था कि उन्हें भारत में धर्म–प्रचार हेतु विशेष सुविधाएं प्रदत्त की जाएं।

विलम्बर फोर्स व अन्य कुछ लोगों ने ब्रिटिश सरकार को प्रेरित किया कि वो भारत में ईसाई धर्म के प्रचार के लिए सक्रिय कदम उठाए।

यद्यपि कम्पनी के संचालक भारत में ईसाइयत के प्रचार के इच्छुक न थे। अतएवं उन्होंने इस सम्बन्ध में कुछ युक्तियां भी सरकार को सुझाईं। संचालकों ने कहा कि कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार को समाप्त कर देने पर उनके लिए भारतीय प्रशासन को कुशलता पूर्वक चलाना कठिन हो जाएगा। संचालकों ने यह भी कहा कि यदि सभी अंग्रेजों को भारत के साथ व्यापार करने की खुली छूट दे दी गई, तो ऐसे अंग्रेज भी भारत जाएंगे, जिनको कि भारतीय रीति–रिवाजों का ज्ञान नहीं है। उनकी गतिविधियां कम्पनी के लिए विभिन्न प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न कर देंगी। संचालकों की इन युक्तियों का कर्नल मैल्कम, कर्नल मुनरो, वारेन हेस्टिंग्स, चार्ल्स ग्रान्ट जैसे कुछ व्यक्तियों का समर्थन भी प्राप्त हुआ, जिन्होंने भारत में अपने जीवन का कुछ समय व्यतीत किया था।

वेलेजली द्वारा भारत में युद्व एवं विजय की नीति का अनुसरण किया गया था, जिसके चलते भारत में ब्रिटिश राज्य–क्षेत्र का अत्यधिक विस्तार हो गया था। इसी के चलते कम्पनी भारत में एक व्यापारिक संस्था से अधिक राजनीतिक सम्प्रभु बन गई थी। अतः अब पार्लियामेन्ट का हस्तक्षेप आवश्यक हो गया था।

नेपोलियन के साथ लड़ाइयों के कारण उत्पन्न आर्थिक संकट, महाद्वीपीय प्रणाली एवं औद्योगिक क्रांति के प्रारम्भिक प्रभावों के कारण स्थिति का यह तकाजा था कि ब्रिटिश राष्ट्र के अधिक हित के लिए नया आर्थिक दृष्टिकोण अपनाया जाए। कम्पनी को पूर्वी गोलार्द्व में व्यापार के लिए दिया गया एकाधिकार अन्य अंग्रेज व्यापारियों के रास्ते में एक बहुत बड़ी बाधा थी, क्योंकि ये अंग्रेज व्यापारी हस्तक्षेप न करने के सिद्धान्त से प्रोत्साहन पाकर और अधिक आर्थिक स्वतंत्रता चाहते थे। यह अभियान कम्पनी की व्यावसायिक स्थिति के लिए गंभीर संकट सिद्ध हुआ और कम्पनी के अंदरूनी वित्तीय संकट से उसकी कमजोरी के स्रोत का पता चला। लॉर्ड वेलेजली की युद्व नीति के चलते कम्पनी की आर्थिक स्थिति शोचनीय हो गई थी और वह कर्ज के बोझ तले दब गई थी। इसलिए उसे सहायता के लिए ब्रिटिश संसद से अनुरोध करने के अलावा और कोई चारा नहीं था।

इन सब के चलते 11 मार्च, 1808 ई0 को

ब्रिटिश संसद ने कम्पनी के मामलों की जाँच करने के लिए एक कमेटी नियुक्त की। आगामी पाँच वर्षों में इस कमेटी ने पाँच रिपोंटें पेश कीं, जिनमें से पाँचवी रिपोंट सबसे प्रसिद्ध थी। इल्बर्ट ने इस रिपोर्ट के सम्बन्ध में कहा है– ''यह रिपोंट अब भी अपने समय की राजस्व, न्याय तथा पुलिस सम्बन्धी व्यवस्था के बारे में आदर्श प्रमाण है।''

1813 ई0 का चार्टर एक्ट–

इस प्रकार, इन रिपोंटों के आधार पर ब्रिटिश पार्लियामेन्ट ने कम्पनी के विषयों में हस्तपेक्ष करते हुए 1813 ई0 का चार्टर ऐक्ट पास कर दिया। ए0 आर0 देसाई लिखते हैं– ''1813 के चार्टर ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के एकाधिकार को समाप्त कर भारत को अंग्रेज सौदागरों के निर्बाध व्यापार के लिए मुक्त कर दिया। ये नए सौदागर सोलहवीं सत्रहवीं सदी में यहां आने वाले पुराने सौदागरों से भिन्न थे। ये नए सौदागर भारत में निर्मित सामान खरीदने नहीं, वरन् इंग्लैण्ड की मिलों में बने सामान बेचने और इन मिलों के लिए कच्चा माल ले जाने आए थे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी अब मुख्यतः इंग्लैण्ड के औद्योगिक वर्गो के राजनीतिक स्वार्थों की अनुचरी थी। 1814 के बाद अंग्रेजी उद्योगों के लिए आवश्यक कच्चे माल का आयात–निर्यात् ही इसकी नीतियों का मूल उद्देश्य रहा।''

1813 ई0 के इस चार्टर ऐक्ट में कई प्रमुख धाराओं का समावेश था। रस्तोगी लिखते हैं कि ''इस आज्ञापत्र के द्वारा निश्चय किया गया कि भारतीय राज्य की संप्रभुता ब्रिटिश सम्राट के हाथ में रहेगी। इस प्रकार इस आज्ञापत्र द्वारा कम्पनी का एकाधिकार समाप्त कर दिया गया।'' साथ ही व्यापारियों के लिए भारत के साथ व्यापार करने हेतु लाइसेन्स व परमिट लेना अनिवार्य कर दिया गया। ये लाइसेन्स संचालक मंडल से जारी किये जाते थे और उसके इन्कार करने की स्थिति में नियन्त्रण मन्डल से प्राप्त किये जा सकते थे।

इस ऐक्ट द्वारा ''केवल चाय पर कम्पनी का एकाधिकार बना रहा। चीन से व्यापार करने का एकाधिकार भी कम्पनी के पास रहा।'' यह सुविधा इसलिए प्रदान की गई थी, ताकि कम्पनी इन साधनों की आय से अपना भारतीय शासन प्रबन्ध आसानी से चला सके।

एग्नेस ठाकुर के अनुसार, ''1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट ने कम्पनी के व्यापारिक राजस्व एवं क्षेत्रीय राजस्व को पृथक् कर दिया, जिसके चलते 1813 ई0 से 1833 ई0 तक भारतीय धन निष्कासन ने 'अप्रतिदत्त निर्यात्' का रूप धारण कर लिया। इस धन निष्कासन में देशी राजाओं द्वारा दिया धन कम्पनी द्वारा अधिशेष राजस्व को निर्यात् व्यापार में निवेश करना, शेयर धारकों को कम्पनी द्वारा लाभांश देना आदि सम्मिलित थे।'

इस अधिनियम में भारतीय राजस्व के प्रयोग के लिए कुछ नियम बनाए गए थे। कम्पनी के राजस्व पर सबसे प्रथम उत्तदायित्व फौज को रखना था। सूद का देना दूसरी बड़ी मद थी तथा नागरिक तथा व्यापारिक कर्मचारियों को रखना तीसरी मद थी। कम्पनी के ऋण को घटाने के सम्बन्ध में भी इसमें व्यवस्था की गई थी।

मित्तल लिखते है– ''इस चार्टर अधिनियम में कम्पनी द्वारा भारत में अर्जित किये गए क्षेत्र को उसी के अधिपत्य में बनाए रखने की व्यवस्था थी और उसके राजस्व पर इंग्लैण्ड के क्राउन की सम्प्रभुता पूर्णतः सुरक्षित कर दी गई। भारत में स्थित सरकार को अपने अन्तर्गत् देशी सशस्त्र सेनाओं के सम्बन्ध में विधियों और विनियम बनाने की शक्ति प्रदान कर दी गई तथा कोर्ट्स मार्शल गठित करने का भी प्राधिकार प्रदान किया गया। उन्हें यह भी शक्ति प्रदान की गई कि वे सुप्रीम कोर्ट के क्षेत्राधिकार के अधीन रहने वाले व्यक्तियों पर टैक्स लगा सकें और टैक्स अदा न करने की स्थिति में उन्हें दन्डित करने की व्यवस्था की गई।''

इस ऐक्ट ने भारतीय राजस्व के बारे में कुछ उपबन्ध बनाए। इस सम्बन्ध में आर0 पी0 वर्मा के अनुसार, 'इस अधिनियम द्वारा भारतीय राजस्व का प्रयोग सेना के खर्च, ब्याज के भुगतान एवं असैनिक व व्यापारिक व्यवस्था के खर्च पर किया जाएगा।'

इस ऐक्ट द्वारा शान्ति–न्यायाधीशों के सम्बन्ध में

कही गई बात को मित्तल कुछ इस प्रकार लिखते हैं।– "शान्ति न्यायाधीशों को आघात या अतिचार के मामलों में क्षेत्राधिकार प्रदान किया गया, जहाँ ब्रिटिश प्रजाजनों द्वारा देशी व्यक्तियों द्वारा अपराधकारित किये जाते थे,
या ब्रिटिश प्रजाजनों के छोटे–मोटे ऐसे ऋणों के मामले भी उनके क्षेत्राधिकार में दिये गये, जिनमें ब्रिटिष प्रजाजन को देषी व्यक्तियों से ऋणों की वापसी करानी थी।"

इस ऐक्ट द्वारा भारत में शैक्षिक विकास का कार्य भी किया गया। लॉर्ड मिन्टो ने 1811 ई0 में भारत में साहित्य तथा विज्ञान की उपेक्षा के सम्बन्ध में दुःख प्रकट किया था, तथा विद्यमान कॉलेजों में सुधार तथा अतिरिक्त नए कॉलेजो की स्थापना के सम्बन्ध में कुछ सुझाव भी दिये गए थे। "1813 ई0 में जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी का पुनः चार्टर स्वीकृत किया गया, तो उसकी एक धारा में यह बतलाया गया कि कम से कम एक लाख रूपये की राशि अलग रख दी जाएगी तथा भारत के ब्रिटिश प्रदेशों में साहित्य के पुनरूद्वार तथा सुधार में तथा वैज्ञानिक ज्ञान के प्रारम्भ तथा वृद्धि के लिए व्यय की जाएगी।"

भारत के विशाल जन–समुदाय को शिक्षित बनाने के लिए यद्यपि यह धन अत्यन्त ही अपर्याप्त था, तथापि भारतीयों की शिक्षा की ओर 1813 ई0 के चार्टर द्वारा सर्वप्रथम ब्रिटिश सरकार ने ध्यान दिया। लेकिन 1823 ई0 तक कम्पनी सरकार ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया एवं अरबी, फारसी तथा संस्कृत की कुछ पुरानी पुस्तकें छापने के अतिरिक्त शिक्षा–सम्बन्धी कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं किया। हाँ एक काम इसने अवश्य किया कि ईसाई मिशनरियों पर लगे प्रतिबन्धों को इसने उठा दिया एवं इन ईसाई मिशनरियों ने शिक्षा प्रसार के लिए अनेकानेक स्कूल खोले।

ऐक्ट के इस प्रावधान से कि ईसाई धर्म प्रचारक भारत में बेरोकटोक ईसाई धर्म प्रचार कर सकते हैं, ईसाई धर्म प्रचारकों को बड़ी सहूलियत हो गई। बंगाल में अलेक्जेंडर डफ और विल्सन ने ईसाई धर्म प्रचार में बड़ा योगदान दिया। इसी समय इंग्लैण्ड और यूरोप में अनेक ईसाई मिशनरियों की स्थापना हुई। फलतः पश्चिमी देशों से अनेक ईसाई धर्म प्रचारक मिशनरियां भारत आई। दि चर्च मिशनरी सोसाइटी, दि सोसाइटी फॉर दि प्रोपेगेशन ऑफ क्रिश्चियन नॉलेज, दि सोसाइटी फॉर दि प्रोपेगेशन ऑफ दि गोसपेल आदि अनेक ईसाई मिशनरियों ने भारत में ईसाई धर्म प्रचार का कार्य तेजी से शुरू किया। 19 वीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में दि लन्डन मिशनरी सोसाइटी, दि बैप्टिस्ट मिशनरी सोसाइटी एवं चर्च मिशनरी सोसाइटी काफी सक्रिय थीं।

इंग्लैण्ड एवं यूरोप में सुसमाचारकों के पुनरूत्थान एवं 1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट की सहूलियतों के फलस्वरूप एशिया और अफ्रीका के देशों में ईसाई धर्म प्रचार का काम आसान हो गया। पश्चिमी ईसाई धर्म प्रचारकों ने मानवीय व लोकहितैषी कार्यों में हाथ बटाना शुरू किया। भारत में ईसाई मिशनरियों का प्रमुख उद्देश्य ईसाई धर्म का प्रचार करना था। उनका प्रत्येक सामायिक कार्य धर्म प्रभावित होने लगा। के0 इनधम ने अपनी पुस्तक 'रिफॉर्म्स इन इण्डिया' में ईसाई धर्म प्रचारकों के इस कार्य को सुसमाचार का कार्य कहा है। ईसाई धर्म प्रचारकों को भारत में आने की सहूलियत प्रदान कर 1813 ई0 के इस चार्टर ऐक्ट ने एक प्रकार से भारतीय शिक्षा को बढ़ावा दिया, तथापि ऐक्ट का मुख्य उद्देश्य यह नहीं था। इन धर्म प्रचारकों ने भारत में कई स्थानों पर अपने मिशनरी स्कूल खोले, जिसने कि भारतीय शिक्षा को प्रोत्साहित करने का कार्य किया साथ ही विदेशी शिक्षा को भी।

राय लिखते हैं कि "1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट में प्रतिवर्ष शिक्षा पर व्यय होने वाली एक लाख रूपये की जो धनराशि की व्यवस्था की गई थी, वह धनराशि प्रतिवर्ष एकत्रित होती गई। इसका एक मुख्य कारण यह था कि कम्पनी के अधिकारी इस विषय पर एकमत नहीं थे कि भारत में अंग्रेजी भाषा के माध्यम से षिक्षा दी जाये। अधिकांष अंग्रेज इस समय भारतीय भाशाओं को ही षिक्षा का माध्यम बनाना चाहते थे। कमिटी ऑफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन ने संस्कृत के अध्ययन की ओर विशेष ध्यान दिया।"

इस तरह, अंग्रेज भारतीयों को पाश्चात्य शिक्षा देने के विरूद्ध थे, जबकि उस समय के कुछ प्रगतिशील भारतीय अंग्रेजी शिक्षा के पक्ष में थे। बहरहाल, शिक्षा के क्षेत्र में 1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट द्वारा उठाया गया कदम सराहनीय था।

इस अधिनियम के द्वारा उन मुकदमों के लिए न्याय–व्यवस्था का विशेष प्रबन्ध किया गया, जिनमें ब्रिटिश प्रजाजन तथा भारतीय व्यक्ति प्रभावित हों। चोरी, जालसाजी तथा सिक्कों के अपराधों के लिए विशेष जुर्मानों की व्यवस्था की गई। मित्तल इस ऐक्ट के उपबन्धों को इस प्रकार लिखते हैं, "ऐसे ब्रिटिश प्रजाजन, जो कि प्रेसीडेन्सी नगरों से 10 मील से अधिक की दूरी में रह रहे थे, व्यापार कर रहे थे या अचल सम्पत्ति पर कब्जा किये हुए थे, दीवानी अदालतों के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत रखा गया, फिर भी दीवानी अदालतों के निर्णयों के विरूद्ध सुप्रीम न्यायालयों में अपील की जा सकती थी। उन्हें जिला या नगर न्यायालयों के साथ अपने–आप को रजिस्टर्ड करना पड़ता था। इसके साथ ही ऐसे ब्रिटिश प्रजाजनों के आपराधिक मामलों के सम्बन्ध में क्षेत्राधिकार प्रयोग करने के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध किये गए, जो कि इन नगरों से 10 मील की दूरी पर रहते थे। उनकी दोषसिद्धि को सरटिओरारी के सुप्रीम कोर्ट्स तक भेजे जाने की भी व्यवस्था की गई।"

1813 ई0 के इस ऐक्ट द्वारा "भारत में कम्पनी के प्रदेशों की स्थानीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया कि वे सुप्रीम कोर्ट के अधिकार क्षेत्र में रहते हुए वहां की जनता पर टैक्स लगा सकती हैं। और टैक्स न देने वालों को दन्ड दे सकती हैं।"

मित्तल ने लिखा है कि 1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट ने "विधायनी शक्ति को विस्तारित कर दिया और उन्हें और भी कड़े अध्यधीन बना दिया। इसने उन्हें इस बात की शक्ति प्रदान कर दी कि वे प्रेसीडेन्सी नगरों के भीतर कर या चुँगी लगा सकें, और उसी रूप में विनियम पारित करें, जैसे कि अन्य विनियमों को उनके प्रवर्तन के निमित्त निर्मित किया गया था। दूसरे यह कि इसने यह अधिनियम किया कि विभिन्न अधिनियमों के अन्तर्गत् संरचित विभिन्न विनियमों की प्रतियां संसद के समक्ष वार्षिक आधार पर प्रस्तुत की जाएंगी।"

'इस अधिनियम ने भारत में ईसाई धर्म के प्रचार की अनुमति दी।' ऐक्ट में यह कहा गया था कि भारत में रहने वाले तथा वहां जाने वाले सभी लोगों को भारतीयों में उपयोगी ज्ञान, धर्म तथा नैतिक उत्थान के प्रचार का अधिकार होगा। इस तरह से ईसाई धर्म तथा पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार के लिए भारत में यह पहला कदम था। परन्तु इस उद्देश्य को छुपाने हेतु ऐक्ट में यह भी कहा गया कि कम्पनी की नीति भारतीयों को अपने धर्म का पूर्ण पालन करने की स्वतन्त्रता देने की है। परन्तु यूरोपीय लोगों के हितों का ध्यान रखने हेतु इस अधिनियम द्वारा भारत में बिशप तथा तीन छोटे पादरियों की नियुक्ति का प्रबन्ध किया गया।

'भारतीय राजस्व से वेतन पाने वाली ब्रिटिश सेना की संख्या इस ऐक्ट ने 29,000 निश्चित कर दी' , साथ ही कम्पनी को यह शक्ति प्रदान की गई कि वह भारतीय सैनिकों के लिए कानून तथा नियम आदि बना सके।

ऐक्ट द्वारा यह प्रावधान किया गया कि गवर्नर जनरल, प्रधान सेनापति एवं प्रान्तीय गवर्नरों की नियुक्ति कम्पनी के संचालकों द्वारा की जानी थी, परन्तु उन नियुक्तियों को लिए अन्तिम स्वीकृति ब्रिटिश सम्राट से प्राप्त करना अनिवार्य था। इसके अतिरिक्त उन पर बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के अध्यक्ष के हस्ताक्षर भी आवश्यक थे।

इस ऐक्ट ने कम्पनी के नागरिक एवं फौजी कर्मचारियों हेतु प्रशिक्षण की व्यवस्था की। बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल की देखरेख में हेलीबरी के कॉलेज, एडिसकौम्बी के सैनिक शिक्षणालय को रखने का निश्चय किया गया। बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के नियमों के अनुसार ही कलकत्ता तथा मद्रास के कॉलेजों को चलाने का निश्चय किया गया।

इस ऐक्ट ने बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल की शक्तियों को निश्चित किया एवं इसकी निगरानी व आदेश जारी करने की शक्तियों को बढ़ा दिया। दीवानी प्रबन्ध कम्पनी के पास रखा गया तथा कम्पनी के

मामलों में अन्तिम निर्णय ब्रिटिश सम्राट का माना गया।

यद्यपि पूर्व के नियमों की तरह ही 1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट का भी विशेष महत्व नहीं था, तथापि इसे एकदम महत्वहीन नहीं कहा जा सकता है। 'इसके द्वारा भारतीय व्यापार पर कम्पनी के एकाधिकार को समाप्त करने का अधिकार प्रदान किया गया। जिसके चलते अनेक अंग्रेज व्यापारी भारत के साथ वाणिज्य तथा व्यापार करने लगे।' आगामी 50 वर्षों में इंग्लैण्ड का व्यापार सात गुना हो गया और वहां के व्यापारियों ने अकूत धन कमाया। इस व्यापार वृद्धि से ही अंग्रेज नेपोलियन द्वारा की गई महाद्वीपीय व्यवस्था के कारण उत्पन्न आर्थिक हानि की पूर्ति भली भाँति कर सके।

इस ब्रिटिश पूँजी एवं उद्यम के स्वतन्त्र आगमन से भारत में शोषण का एक युग प्रारम्भ हो गया। अंग्रेज व्यापारियों के सस्ते व मशीनी माल ने भारतीय व्यापार तथा उद्योग को गहरी चोट पहुँचाई। इसके बाद से ही भारत उद्योग प्रधान देश न रहकर कृषि प्रधान देश बन गया। एल्फ्रेड लॉयल ने ठीक ही कहा है कि भारतीय करघों का बना हुआ कपड़ा लंकाशायर के कारखानों में तैयार हुए माल का मुकाबला न कर सका। 'धीरे–धीरे भारत उद्योग क्षेत्र में बहुत पीछे रह गया एवं जनता का मुख्य व्यवसाय कृषि बन गया। कृषि पर निर्भरता बढ़ने के साथ–साथ देश उत्तरोत्तर निर्धन होता गया।'

चूँकि इस चार्टर ऐक्ट ने सभी अंग्रेजों के लिए भारत से व्यापार के दरवाजे खोल दिये थें। अतः यें निश्चित था कि अब भारत के कच्चे माल का निर्यात बढ़ जाएगा और इसका उदाहरण तब देखने को मिला जब 1813 ई0 में ही भारत से ब्रिटेन को 9 मिलियन पौण्ड का कच्चा कपास भेजा गया।

इस चार्टर ने अंग्रेज व्यापारियों को जो सहूलियतें प्रदान की थीं, उनके चलते 1814 ई0 से 1835 ई0 के बीच इंग्लैण्ड ने भारत मे अपने सूती वस्त्र का निर्यात तेज कर दिया। सूती और ऊनी वस्त्रों पर क्रमशः 3.5 और 2 प्रतिशत आयात शुल्क लगता था। किन्तु इंग्लैण्ड में भारतीय सूती, सिल्क और ऊनी वस्त्रों पर क्रमशः 10, 20 और 30 प्रतिशत आयात शुल्क लिया जाता था। वस्तुतः 1813 ई0 के इस ऐक्ट पे यह सिद्ध कर दिया कि ब्रिटिश सरकार भारतीय कुटीर उद्योग–धन्धों के सर्वनाश पर तुली हुई थी। ढाका, मुर्शिदाबाद आदि शहरों के बुनकर बेकार हो गए। सर ट्रेवेलियन ने 1840 ई0 मे संसदीय जाँच के समिति के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए कहा कि ढ़ाका की आबादी 150,000 से घटकर 30,000 हो गई है। शहर वीरान सा लगता है। जंगल उग रहे हैं तथा मलेरिया का प्रकोप बढ़ा रहा है। इसी तरह समिति के समक्ष मांटगोमरी ने कहा कि सूरत, ढाका, मुर्शिदाबाद तथा अन्य स्थानों की संपन्नता विपन्नता में बदल गई है। भारतीय प्रदेशों के इन हालातों की जिम्मेदारी काफी हद तक 1813 ई0 में अंग्रेजों के लिए निर्बाध व्यापार की सहूलियतें ही थीं।

'इस ऐक्ट का महत्व इस बात में भी है कि इसके द्वारा कम्पनी के प्रदेशों पर वास्तविक सत्ता इंग्लैण्ड के सम्राट की मानी गई। संवैधानिक दृष्टिकोण से यह घोषणा अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी गई।'

न्याय प्रशासन के सम्बन्ध में इस ऐक्ट ने कुछ सराहनीय कदम उठाए। बम्बई के सम्बन्ध में एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है, जहां अपील करने की सबसे पहली अनुमति 1812 ई0 में दी गई थी। उसी वर्ष से विनियम ने ऐसे नियमों का अधिनियमन किया था, जिसमें सदर दीवानी अदालत से प्रिवी कौंसिल में जाने वाली अपीलों को विनियमित किया गया, विशेष रूप में 5,000 स्टर्लिंग पौन्ड के मूल्य के बाद में, व्यय मूल्य को छोड़कर, ऐसी अपीलें विनियमित की गई थीं।

दरअसल, 1813 ई0 में इंग्लैण्ड के कॉमन्स सदन की एक कमेटी ने भी उस समय की न्याय – व्यवस्था की कड़ी आलोचना की और कम्पनी को निर्देश दिया की वस्तुस्थिति में सुधार करने के लिए शीघ्र ही कदम उठाये जायें। समिति ने इस बात का उल्लेख किया था कि न्याय में विलम्ब होने के कारण अनेक बुराईयां उत्पन्न हो गयी हैं। इन बुराईयों में से एक तो यह थी चूंकि किसी विशय के शीघ्र निर्णीत

होने की सम्भावना नहीं थी, अतः उनसे आबद्ध व्यक्ति निराश हो जाते थे और कानून का सहारा लेने के स्थान पर स्वयं कानून को अपने हाथों में लेने लगते थे। जिस सम्पत्ति पर झगड़ा होता था, उस पर वह जबरदस्ती कब्जा कर लेते थे और अदालत के फैसले का इंतजार करना छोड़ देते थे, क्योंकि वे जानते थे कि इस विषय का फैसला उनके जीवनकाल में नहीं होगा। इस प्रकार देश में भूमि की सीमाओं और जायदाद सम्बन्धी विशयों को लेकर फौजदारी झगड़े नित्य प्रति होते रहते थे। शांति भंग की घटनाओं में निरन्तर वृद्धि होने लगी थी। घूसखोरी, भ्रष्टाचार और घोषण में भी वृद्धि हुई थी। जनता को चूँकि अपने विषयों में शीघ्र फैसले की आषा नहीं होती थी, अतः वह गैरकानूनी ढंग से अदालतों के अधीनस्थ कर्मचारियों को इस आशा से घूस देने लगे की उनके मुकद्दमों को प्राथमिकता दिलाकर सुनवाई में शीघ्रता करा दी जायेगी।

इस ऐक्ट के द्वारा प्रारम्भ में बम्बई के सम्बन्ध में इन समस्याओं का निस्तारण किया गया।

मित्तल के अनुसार, ''1813 ई0 में पारित एक विनियम ने इन नियमों को मंसूख कर दिया और बम्बई सरकार की इस विधिक क्षमता पर सन्देह व्यक्त किया गया कि वह सम्राट की संविधि के अन्तर्गत् सदर अदालत के निर्णयों के विरूद्ध प्रिवी कौंसिल में अपीलें प्रविष्ट करने की अनुमति दे सकती है अथवा नहीं।''

'कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार का इंग्लैण्ड में बहुत समय से लोकमत विरोध कर रहा था एवं सबको भारत से स्वतंत्र व्यापार का अधिकार दिये जाने की माँग कर रहा था। कम्पनी ने यद्यपि इस बात का विरोध किया, परन्तु लोकमत की अवहेलना करना पार्लियामेन्ट के लिए असम्भव था। जिसके चलते संसद ने जनता की इच्छा का आदर करते हुए कम्पनी के एकाधिकार को समाप्त कर दिया। 1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट में प्रदत्त रियायतों के आधार पर इस ऐक्ट के बाद कलकत्ता में यूरोपीय पद्धति पर कुछ बैंको का गठन किया गया। भारत के लोगों ने यद्यापि प्रारम्भिक यूरोपीय बैंको से कोई लाभ नहीं उठाया और न बैंकों ने देश की वित्तीय स्थिति में कोई सुधार ही किया। वे केवल भारत में अंग्रेजों के विदेशी व्यापार को मदद पहुँचाते रहे। यत्र–मुद्रा निकालकर उन्होंने कम्पनी सरकार की प्रतिभूतियों को बनाए रखा, जो बैंकों द्वारा निर्गत किये गए नोटो की अमानत थी।

'इस ऐक्ट का महत्व इस बात में भी निहित है कि भारतीयों की शिक्षा के लिए भी एक लाख रूपये प्रतिवर्ष खर्च करने की व्यवस्था भी इसके द्वारा की गई।' इस दिशा में यद्यपि आगामी बीस वर्षों तक कोई ठोस कदम नहीं उठाया जा सका एवं एक लाख रूपया प्रतिवर्ष जमा होता रहा। तथापि यह ऐक्ट इस श्रेय का अधिकारी है कि 'इसके द्वारा ब्रिटिश सरकार ने पहली बार भारतीयों के सैन्य एवं बौद्धिक उत्थान का दायित्व अपने ऊपर लिया।' साथ ही इस ऐक्ट ने शिक्षा क्षेत्र में पग उठाने के लिए आधार भी प्रदान किया।

इस ऐक्ट द्वारा भारत में ईसाई मिशनरियों को ईसाई धर्म का प्रचार करने की आज्ञा दे दी गई। जिन्होंने भारत में ईसाई धर्म प्रचार के साथ–साथ शिक्षा–प्रचार के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय कार्य किये हैं। ''1813 ई0 के चार्टर ऐक्ट में उन्हें अपने कार्य–सम्पादन में कानून के

द्वारा अनेक सुविधांए दी गईं। फलतः प्रेसीडेन्सियों में बिशप नियुक्त किये गए। बहुसंख्या में उच्च वर्ग के शिक्षित हिन्दुओं को ईसाई धर्म में अंगीकृत किया गया। केरे, डफ, ग्रान्ट, मार्शमैन तथा डॉ0 फोरमेन जैसे मिशनरी के लोगों ने हिन्दुओं को ईसाई बनाने में बहुत कार्य किया।''

'जब भारत में ईसाई मिशनरियों ने अधिकाधिक संख्या मे दलित वर्ग के हिन्दुओं को ईसाई बनाना प्रारम्भ किया, तो हिन्दू समाज के नेताओं की आँखें खुल गईं। उन्होंने हिन्दू समाज में सुधार–आन्दोलनों को प्रारम्भ किया। इस प्रकार भारतीय पुनर्जागरण को इससे बड़ा बल मिला।'

1813 ई0 के इस ऐक्ट को कई तरह से कम्पनी के पतन की शुरूआत माना जा सकता है। यद्यपि इस ऐक्ट के आने के बाद भी कम्पनी ने कई

वर्षों तक कार्य किया और बहुत सारे इलाके जीते। तथापि इसने भारत के साथ कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार व वाणिज्य पर कुठाराघात किया, हालांकि चीन के साथ कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार को आगामी बीस वर्षों तक बनाये रखा गया। ऐक्ट ने कम्पनी को ब्रिटिश शासक की प्रभुसत्ता के अधीन बीस वर्षों की और अवधि के लिए भारत से राजस्व प्राप्त करने का अधिकार प्रदान किया।

इस ऐक्ट में कुछ नई बातों का समावेश किया गया था, जैसे – जो क्रिश्चियन मिशनरी धार्मिक या अन्य कानून सम्मत उद्देश्यों से भारत में आना चाहते थे, उन्हें कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स या निदेशक मण्डल द्वारा लाइसेंस दिये जा सकते थे और यदि उन्हें कोर्ट ऑफ डायरेक्टर्स से लाइसेंस दिये जाने पर कोई आपत्ति हो, तो यह लाइसेंस बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल दे सकता था। इस प्रकार 1813 ई0 के इस चार्टर ऐक्ट ने ब्रिटिश शासक की प्रभुसत्ता पर ज्यादा जोर दिया और इससे बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के अधिकार बढ़ गये तथा कम्पनी के व्यावसायिक विशेषाधिकार कम हो गये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, राम चन्द्र, भारत का संवैधानिक विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, प्रथम खंड, पृ0 34.
2. रायचौधरी, एस0 सी0, हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इण्डिया, पृ0 330.
3. इल्बर्ट, द गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया, पृ0 73.
4. देसाई, ए0 आर0, भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ0 70.
5. रस्तोगी, दया प्रकाश, भारत का संविधान, पृ0 3 .
6. वही, पृ0 3.
7. ठाकुर, श्रीमती एग्नेस, भारत का आर्थिक इतिहास, पृ0 309.
8. मित्तल, जे0 के0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 124.
9. वर्मा0, आर0 पी0, भारत का संवैधानिक इतिहास, पृ0 26.
10. मित्तल, जे0 के0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 124 – 25.
11. राय, कौलेश्वर, ब्रिटिश कालीन भारत का सामाजिक, आर्थिक इतिहास, पृ0 99.
12. राय, कौलेश्वर, ब्रिटिश कालीन भारत का सामाजिक, आर्थिक इतिहास, पृ0 99.
13. मित्तल, जे0 के0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 125.
14. अग्रवाल, आर0 सी0, भारत का संवैधानिक विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, प्रथम खंड, पृ0 35.
15. मित्तल, जे0 के0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 389–90.
16. रायचौधरी, एस0 सी0, हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इण्डिया, पृ0 331.
17. वह।
18. रायचौधरी, एस0 सी0, हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इण्डिया, पृ0 331.
19. अग्रवाल, आर0 सी0, भारत का संवैधानिक विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, प्रथम खंड, पृ0 36.
20. रायचौधरी, एस0 सी0, हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इण्डिया, पृ0 331.
21. मित्तल, जे0 के0, भारतीय विधि का इतिहास, पृ0 331.
22. रायचौधरी, एस0 सी0, हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इण्डिया, पृ0 331.
23. अग्रवाल, आर0 सी0, भारत का संवैधानिक विकास तथा राष्ट्रीय आन्दोलन, प्रथम खंड, पृ0 37.
24. वही, पृ0 36.
25. राय, कौलेश्वर, ब्रिटिश कालीन भारत का सामाजिक, आर्थिक इतिहास, पृ0 80.
26. शुक्ल, आर0 एल0, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ0 229.